मनुष्याणाम्=मनुष्यों में; **सहस्रेषु**=हजारों; **कश्चित्**=कोई एक; **यतति**=प्रयास करता है; **सिद्धये**=कृतार्थता के लिए; **यतताम्**=इस प्रकार यत्नशील मनुष्यों में; **अपि**=भी; **सिद्धानाम्**=सिद्धों में; **कश्चित्**=कोई एक; **माम्**=मुझे; **वेत्ति**=जानता है; **तत्त्वतः**=तत्त्व से।

अनुवाद

हजारों मनुष्यों में से कोई एक संसिद्धि के लिए यत्न करता है और उन सिद्ध हुए पुरुषों में भी कोई दुर्लभ मनुष्य ही मुझे तत्त्व से जानता है।।३।।

तात्पर्य

विभिन्न श्रेणियों के हजारों मनुष्यों में से किसी एक दुर्लभ मनुष्य की आत्मतत्त्व, देहतत्त्व एवं परतत्त्व को जानने के लिए पारमार्थिक अनुभूति में पर्याप्त रुचि होती है। मानव-समाज साधारणतया आहार, निद्रा, मैथुन, भय आदि पशुवृत्तियों में मग्न है; दिव्यज्ञान के लिए प्रायः सभी में रुचि का अभाव है। गीता के प्रथम छः अध्याय दिव्यज्ञान के उन जिज्ञासुओं के लिए हैं, जो आत्मज्ञान तथा परमात्मज्ञान के लिए ज्ञानयोग, ध्यानयोग, विवेक-बुद्धि आदि तत्त्व-साक्षात्कार मार्गों का अनुगमन करते हैं। परन्तु श्रीकृष्ण के तत्त्व को तो केवल कृष्णभावनाभावित भक्त ही जान सकते हैं। अन्य योगियों को निर्विशेष ब्रह्मानुभूति हो सकती है, क्योंकि श्रीकृष्ण के तत्त्वज्ञान की तुलना में यह सुगम है। पुरुषोत्तम श्रीकृष्ण ब्रह्म और परमात्मा के ज्ञान से भी परे हैं। निर्विशेषवादियों के अग्रगण्य श्रीपाद शंकराचार्य ने अपने गीताभाष्य में श्रीकृष्ण को परमब्रह्म स्वयं भगवान् स्वीकार किया है; फिर भी योगी और ज्ञानी श्रीकृष्ण को समझने के प्रयास में संभ्रमित हो रहे हैं। शंकराचार्य के अनुगामी श्रीकृष्ण को भगवान् नहीं मानते। कारण, निर्विशेष ब्रह्मानुभूति हो जाने पर भी श्रीकृष्ण के तत्त्व को जान पाना बड़ा कठिन है।

भगवान् श्रीकृष्ण आदिपुरुष गोविन्द और सब कारणों के परम कारण हैं। **'ईश्वरः परमः कृष्णः सच्चिदानन्दविग्रहः। अनादिरादिर्गोविन्दः सर्वकारण-कारणम्।'** अभक्तों के लिए उन्हें जानना बड़ा कठिन है। उन अभक्तों का कहना है कि भक्ति-मार्ग अति सुगम है, परन्तु उसका अभ्यास वे नहीं कर सकते। अभक्तों के कथन के अनुसार यदि भक्ति-मार्ग वास्तव में इतना सुगम है तो वे इसको त्याग कर कष्टसाध्य निर्विशेष-पथ को ही क्यों ग्रहण करते हैं? सत्य यह है कि भक्ति-मार्ग सुगम नहीं है। भक्ति के ज्ञान के बिना अप्रामाणिक व्यक्तियों द्वारा आचरित नाममात्र का भक्ति-पथ सुगम हो सकता है, पर विधि-विधान के अनुसार भक्ति-पथ का अनुसरण करना मनोधर्मी विद्वानों एवं दार्शनिकों के बस की बात नहीं। इसी से वे अतिशीघ्र भक्तिपथ से नीचे गिर जाते हैं। 'भक्तिरसामृतसिन्धु' में श्रील रूप गोस्वामिचरण का कथन है—

श्रुति स्मृति पुराणादि पञ्चरात्रविधिं विना।
ऐकान्तिकी हरेर्भक्तिरुत्पातायैव कल्पते।।